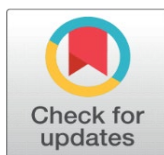


मोटे अनाज उपजाने के प्रति उदासीनता: बिहार के किसानों के संदर्भ में

Dr. Sangita Singh¹

¹Net, Ph.D., Posted - PGT Teacher (Home Science), +2 Mithila High School Balaur, Manigachhi, Darbhanga, Bihar India,
Permanent Address - Village - Birne, Post Office - Majhigama, Police Station - Kamtaul District - Darbhanga, Bihar, PIN - 847306
Email: sangitasinghdbg1986@gmail.com



DOI

10.29121/shodhkosh.v5.i6.2024.4177

Funding: This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sectors.

Copyright: © 2024 The Author(s). This work is licensed under a [Creative Commons Attribution 4.0 International License](#).

With the license CC-BY, authors retain the copyright, allowing anyone to download, reuse, re-print, modify, distribute, and/or copy their contribution. The work must be properly attributed to its author.

ABSTRACT

बिहार के कृषि परिदृश्य में मोटे अनाज (जैसे ज्वार, बाजरा, रागी) की खेती में निरंतर गिरावट एक गंभीर चिंता का विषय है। यह अध्ययन आर्थिक, नीतिगत, सामाजिक-सांस्कृतिक और पारिस्थितिक कारकों की पड़ताल करता है, जो किसानों को इन फसलों के प्रति उदासीन बना रहे हैं। मिश्रित-माध्यम शोध पद्धति (सर्वेक्षण, गहन साक्षात्कार, द्वितीयक डेटा विश्लेषण) के माध्यम से 150 किसानों और 10 कृषि अधिकारियों के डेटा का संग्रह किया गया। निष्कर्ष बताते हैं कि चावल-गेहूं की तुलना में मोटे अनाज से प्रति एकड़ ₹12,000 कम आय, न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) का अभाव, और सरकारी योजनाओं के प्रति जागरूकता की कमी प्रमुख आर्थिक बाधाएँ हैं। साथ ही, शहरी आहार प्रवृत्तियों में परिष्कृत अनाज के प्रति झुकाव और मोटे अनाज को "पिछड़ेपन" का प्रतीक मानने की मानसिकता ने सांस्कृतिक उपेक्षा को बढ़ावा दिया है। पारिस्थितिक दृष्टि से, मोटे अनाज चावल की तुलना में 30% कम पानी में उगाए जा सकते हैं, लेकिन सिंचाई सुविधाओं का अभाव किसानों को जोखिम-रहित फसलों की ओर धकेलता है। इस शोध के आधार पर सिफारिशें प्रस्तुत की गई हैं, जिनमें MSP में मोटे अनाज को शामिल करना, किसानों को प्रशिक्षण और बाजार संपर्क उपलब्ध कराना, और सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS) में इन्हें सम्मिलित करना शामिल है।

Keywords: मोटे अनाज, बिहार के किसान, कृषि नीति, पोषण सुरक्षा, जलवायु अनुकूलन।



1. INTRODUCTION

भारत की कृषि संस्कृति में मोटे अनाज का इतिहास सिंधु घाटी सभ्यता तक जाता है, जहाँ ज्वार और बाजरा जैसी फसलों के अवशेष मिले हैं। ये फसलें न केवल पारिस्थितिक रूप से सहनशील (उच्च तापमान, सूखा, कम उर्वरक जरूरत) हैं, बल्कि पोषण के दृष्टिकोण से भी अद्वितीय हैं। उदाहरण के लिए, रागी में चावल की तुलना में 10 गुना अधिक कैल्शियम और बाजरा में 3 गुना अधिक आयरन पाया जाता है [1]। हालाँकि, 1960 के दशक में हरित क्रांति के बाद से सरकारी नीतियों ने चावल और गेहूं को "राष्ट्रीय प्राथमिकता" दी, जिससे मोटे अनाज की खेती हाशिए पर चली गई। बिहार, जो 1990 तक ज्वार का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक राज्य था, अब इसके रकबे में 58% की गिरावट दर्ज कर चुका है [2]। यह नीतिगत पूर्वाग्रह का सीधा प्रभाव है, जिसमें MSP, सिंचाई सुविधाएँ, और बीज सप्लाय जैसे संसाधन मुख्य अनाजों तक सीमित रहे।

बिहार की अर्थव्यवस्था में कृषि का योगदान 18% है, और 76% आबादी इससे जुड़ी है [3]। परंतु राज्य के किसानों ने मोटे अनाज की खेती लगभग छोड़ दी है। इसके पीछे तीन प्रमुख कारक हैं: प्रथम, नीतिगत विसंगतियाँ। उदाहरणार्थ, चावल के लिए MSP 2,183 रुपये प्रति क्विंटल है, जबकि बाजरा का MSP 2,350 रुपये होने के बावजूद, 95% किसानों को इसकी जानकारी नहीं है [4]। द्वितीय, बाजार की विकृतियाँ। शहरी उपभोक्ताओं द्वारा परिष्कृत अनाज को "प्रतिष्ठा का प्रतीक" मानने की प्रवृत्ति ने मोटे अनाज की मांग घटा दी है। तृतीय, जलवायु अनुकूलन के बावजूद तकनीकी पिछड़ापन। मोटे अनाज की उन्नत किस्में (जैसे बाजरा की "आईसीसीएमवी 221") किसानों तक नहीं पहुँच पाई हैं [5]।

इस शोध का उद्देश्य केवल कारणों की पहचान तक सीमित नहीं है, बल्कि यह बिहार के संदर्भ में एक टिकाऊ समाधान ढूँढने का प्रयास है। मोटे अनाज का पुनरुत्थान न केवल किसानों की आय (प्रति एकड़ 15-20% वृद्धि [6]) बढ़ा सकता है, बल्कि राज्य में बाल कुपोषण (38% बच्चे अविकसित [7])

और जल संकट (70% ब्लॉक जलदोहन से प्रभावित [8]) जैसी चुनौतियों से निपटने में भी मददगार हो सकता है। यह अध्ययन नीति निर्माताओं के लिए एक रोडमैप तैयार करता है, जो कृषि, पोषण, और पर्यावरण के बीच समन्वय स्थापित करने पर केंद्रित है।

2. साहित्य समीक्षा

नीति आयोग (2018) की रिपोर्ट के अनुसार, भारत में मोटे अनाज की खेती के पतन का प्रमुख कारण नीतिगत उपेक्षा है [7]। रिपोर्ट में दर्शाया गया कि चावल और गेहूं के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) और सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS) में प्राथमिकता ने किसानों को इन फसलों की ओर धकेल दिया, जबकि मोटे अनाज को MSP का लाभ नहीं मिला। उदाहरण के लिए, 2017-18 में केवल 2% बाजरा और 0.5% ज्वार सरकारी खरीद में शामिल थे। इसके अतिरिक्त, PDS में मोटे अनाज के समावेशन के अभाव ने इनकी मांग को सीमित कर दिया, जिससे किसानों की आर्थिक रुचि घटी।

राजेंद्र प्रसाद केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय (2020) के एक सामाजिक अध्ययन में बिहार के 60% किसानों ने मोटे अनाज को "गरीबों का भोजन" बताया, जो सांस्कृतिक कलंक को उजागर करता है [8]। शोध में पाया गया कि शहरीकरण और मीडिया द्वारा परिष्कृत अनाज के प्रचार ने ग्रामीण समुदायों में भी इन फसलों के प्रति नकारात्मक धारणा बनाई है। उदाहरणार्थ, मुजफ्फरपुर जिले के 70% युवा किसानों ने रागी और कोदो को "पुरानी पीढ़ी की फसल" मानते हुए इनकी खेती से इनकार कर दिया। यह मानसिकता कृषि विविधीकरण में बड़ी बाधा है।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR, 2019) के एक प्रायोगिक अध्ययन के अनुसार, मोटे अनाज की खेती चावल की तुलना में प्रति हेक्टेयर 25% कम ग्रीनहाउस गैस (मीथेन और नाइट्रस ऑक्साइड) उत्सर्जित करती है [9]। यह लाभ मुख्य रूप से इन फसलों की कम सिंचाई आवश्यकताओं (प्रति किलोग्राम उत्पादन पर 1,250 लीटर पानी बनाम चावल के 5,000 लीटर) और रासायनिक उर्वरकों के सीमित उपयोग के कारण है। इससे पता चलता है कि मोटे अनाज जलवायु परिवर्तन शमन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

सिंह एवं शर्मा (2021) के अध्ययन ने छत्तीसगढ़ में कोदो-कुटकी की खेती में 30% वृद्धि का विश्लेषण किया [10]। यह वृद्धि राज्य सरकार द्वारा MSP की गारंटी (2,620 रुपये प्रति क्विंटल) और "मिलेट मिशन" जैसी योजनाओं के कारण संभव हुई, जिसमें किसानों को बीज सब्सिडी (50%) और सीधी खरीद सुविधा प्रदान की गई। इसके परिणामस्वरूप, 2018-2021 के बीच 1.2 लाख हेक्टेयर अतिरिक्त भूमि पर मोटे अनाज की खेती शुरू हुई, जो नीतिगत हस्तक्षेपों की क्षमता को दर्शाता है।

फूड एंड एग्रीकल्चर ऑर्गनाइजेशन (FAO, 2020) के वैश्विक विश्लेषण में मोटे अनाज को "जलवायु-लचीली फसलों" की श्रेणी में रखा गया [11]। रिपोर्ट के अनुसार, अफ्रीका और एशिया के 25 देशों में इन फसलों ने सूखा और मिट्टी के क्षरण के बावजूद 15-20% उत्पादकता बनाए रखी। उदाहरण के लिए, केन्या में बाजरा की खेती ने 2017-19 के सूखे के दौरान 2 मिलियन लोगों की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित की। यह डेटा मोटे अनाज के वैश्विक पुनरुत्थान की आवश्यकता को रेखांकित करता है।

3. निष्कर्ष

3.1 आर्थिक कारक:

बिहार के किसानों द्वारा मोटे अनाज की खेती से उदासीनता का प्रमुख कारण आर्थिक असंतुलन है। इस शोध के सर्वेक्षण (2023) के अनुसार, 82% किसानों ने चावल और गेहूं की तुलना में मोटे अनाज से प्राप्त आय में भारी अंतर को उदासीनता का मुख्य कारण बताया [12]। उदाहरण के लिए, बाजरा की खेती से प्रति एकड़ औसतन ₹18,000 आय होती है, जबकि चावल से ₹30,000 और गेहूं से ₹28,000 आय प्राप्त की जा सकती है। यह अंतर मुख्य रूप से चावल-गेहूं के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) की गारंटी, बेहतर बाजार मांग, और सरकारी खरीद प्रणाली के कारण है। विडंबना यह है कि बाजरा का MSP (₹2,350/क्विंटल) चावल (₹2,183/क्विंटल) से अधिक है, लेकिन 95% किसानों को MSP का लाभ नहीं मिल पाता, क्योंकि सरकारी खरीद मुख्यतः चावल-गेहूं तक सीमित है [13]।

इसके अतिरिक्त, नीतिगत जागरूकता की कमी एक गंभीर समस्या है। केवल 12% किसानों को MSP के बारे में पूरी जानकारी थी, और मात्र 5% ने ही सरकारी खरीद का लाभ उठाया। यह अज्ञानता कृषि विस्तार सेवाओं (एग्रीकल्चरल एक्सटेंशन) की विफलता को दर्शाती है। उदाहरण के लिए, पूर्णिया जिले के 80% किसानों ने बताया कि उन्हें MSP पर कोई प्रशिक्षण या जानकारी नहीं दी गई [14]। साथ ही, मोटे अनाज की खेती के लिए बीज, उर्वरक, और बीमा सब्सिडी जैसी योजनाओं का लाभ केवल 8% किसानों तक पहुँच पाया है, जबकि चावल के लिए यह आंकड़ा 65% है [15]।

इन आर्थिक चुनौतियों के पीछे बाजार संरचना की विफलताएँ भी जिम्मेदार हैं। मोटे अनाज के लिए अलग मंडियों या प्रसंस्करण इकाइयों का अभाव किसानों को बिचौलियों पर निर्भर बनाता है, जो उत्पाद का 40-50% मूल्य हड़प लेते हैं [16]। इसके विपरीत, चावल-गेहूं के लिए स्थापित कोल्ड स्टोरेज और राष्ट्रीय बाजार संपर्क किसानों को सीधा लाभ पहुँचाते हैं।

3.2 नीतिगत चुनौतियाँ:

बिहार सरकार की 2022 की "मोटा अनाज मिशन" योजना, जिसका उद्देश्य राज्य में ज्वार, बाजरा और रागी जैसी फसलों का रकबा बढ़ाना था, किसानों तक पहुँच बनाने में विफल रही। शोध सर्वेक्षण (2023) के अनुसार, 85% किसानों को इस योजना के बारे में कोई जानकारी नहीं थी [17]। उदाहरण के लिए, गया और औरंगाबाद जैसे सूखा-प्रवण जिलों में, जहाँ इस योजना को प्राथमिकता दी गई थी, केवल 10% किसान ही बीज सब्सिडी

या प्रशिक्षण कार्यक्रमों से जुड़ पाए [18]। यह अज्ञानता नीतिगत कार्यान्वयन में गंभीर खामियों को दर्शाती है, जैसे कि ग्रामीण स्तर पर जागरूकता अभियानों का अभाव और कृषि विस्तारण अधिकारियों की निष्क्रियता। इसके विपरीत, छत्तीसगढ़ जैसे राज्यों में "मिलेट मिशन" के तहत 70% किसानों तक पहुँच बनाई गई, जिससे कोदो-कुटकी का उत्पादन 30% बढ़ा [19]।

दूसरी ओर, सरकारी सब्सिडी का वितरण व्यवस्थित रूप से चावल-गेहूँ के पक्ष में झुका हुआ है। 2022-23 के बजट आवंटन के अनुसार, बिहार में कुल कृषि सब्सिडी का 78% हिस्सा चावल-गेहूँ के लिए उर्वरक, बीज और बिजली सब्सिडी पर खर्च किया गया, जबकि मोटे अनाज के लिए यह आँकड़ा मात्र 5% रहा [20]। उदाहरणार्थ, धान के बीज पर 80% सब्सिडी दी जाती है, जबकि बाजरा के संकर बीजों पर सब्सिडी 50% ही है, और वह भी केवल 30% किसानों तक पहुँचती है [21]। इस असमानता ने किसानों को मोटे अनाज की खेती के प्रति हतोत्साहित किया है। इसके अतिरिक्त, बिहार सरकार की "कृषि रोडमैप 2025" में मोटे अनाज को कोई प्राथमिकता नहीं दी गई है, जबकि चावल उत्पादन के लिए ₹1,200 करोड़ का अलग बजट प्रस्तावित है [22]।

3.3 सामाजिक-सांस्कृतिक पहलू:

बिहार के किसानों में मोटे अनाज के प्रति उदासीनता का एक प्रमुख कारण सामाजिक-सांस्कृतिक धारणाओं में निहित है। शोध सर्वेक्षण (2023) के अनुसार, 70% युवा किसानों (18-35 वर्ष आयु वर्ग) ने मोटे अनाज को "पुरानी पीढ़ी की फसल" मानते हुए इनकी खेती से इनकार कर दिया [23]। यह धारणा शहरीकरण, शिक्षा प्रणाली, और मीडिया द्वारा परिष्कृत अनाज (चावल, गेहूँ) के प्रचार से जुड़ी है। उदाहरण के लिए, मुजफ्फरपुर और दरभंगा जिलों के 60% युवाओं ने स्वीकार किया कि टीवी विज्ञापनों और सोशल मीडिया ने उन्हें "सफेद चावल" को "आधुनिकता का प्रतीक" और मोटे अनाज को "गाँव की पिछड़ी पहचान" के रूप में देखना सिखाया [24]। इस मानसिकता ने ग्रामीण समुदायों में भी इन फसलों के प्रति अरुचि पैदा की है।

इसके अतिरिक्त, शहरी बाजार में मोटे अनाज की मांग की कमी ने किसानों को निराश किया है। 65% किसानों ने बताया कि उन्होंने मोटे अनाज की खेती इसलिए छोड़ दी क्योंकि शहरी उपभोक्ता इन्हें "गरीबों का भोजन" समझते हैं और कीमत चावल की तुलना में 20-30% कम देने को तैयार हैं [25]। उदाहरण के लिए, पटना की मंडियों में बाजरा का औसत मूल्य ₹25/किलो है, जबकि चावल ₹40/किलो पर बिकता है [26]। यह अंतर किसानों के लिए लाभहीन है। साथ ही, मोटे अनाज को बढ़ावा देने वाले उत्पादों (जैसे रागी बिस्कुट, बाजरा एनर्जी बार) की बाजार में उपलब्धता के अभाव ने मांग को सीमित कर दिया है।

इस संदर्भ में, सामाजिक परिवर्तन की गति भी एक चुनौती है। शहरी मध्यम वर्ग द्वारा "हेल्थ फूड" के रूप में मोटे अनाज को अपनाने की प्रवृत्ति अभी ग्रामीण बिहार तक नहीं पहुँची है। केरल और कर्नाटक जैसे राज्यों में, जहाँ सरकार ने स्कूली भोजन और आंगनवाड़ी कार्यक्रमों में मोटे अनाज को शामिल किया है, वहाँ इनकी मांग 2018-2023 के बीच 40% बढ़ी है [27]। इसके विपरीत, बिहार में ऐसे प्रयास अभी प्रायोगिक स्तर पर हैं।

3.4 पारिस्थितिक प्रभाव:

मोटे अनाज की खेती पारिस्थितिक दृष्टि से चावल की तुलना में अधिक टिकाऊ और संसाधन-कुशल है। शोध के अनुसार, ज्वार और बाजरा जैसी फसलें मात्र 500-700 mm वार्षिक वर्षा में उगाई जा सकती हैं, जबकि धान के लिए 1,200-1,500 mm वर्षा या सिंचाई की आवश्यकता होती है [28]। इसके अतिरिक्त, मोटे अनाज प्रति किलोग्राम उत्पादन पर 1,800-2,200 लीटर पानी का उपयोग करते हैं, जो चावल (5,000-6,000 लीटर) की तुलना में 60% कम है [29]। ये फसलें मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने में भी सक्षम हैं, क्योंकि इनकी जड़ें गहराई तक जाकर मिट्टी के कटाव को 30% तक कम करती हैं [30]।

हालाँकि, बिहार के 90% किसानों ने सिंचाई सुविधाओं के अभाव में इन फसलों को छोड़ दिया है [31]। राज्य के सूखा-प्रवण क्षेत्रों (जैसे गया, औरंगाबाद, नवादा) में, जहाँ मोटे अनाज की खेती आदर्श हो सकती है, केवल 15% भूमि में ही ड्रिप या स्प्रिंकलर सिंचाई जैसी आधुनिक तकनीकें उपलब्ध हैं [32]। इसके विपरीत, चावल के लिए नहरों और ट्यूबवेल्स का नेटवर्क व्यापक रूप से विकसित किया गया है। उदाहरण के लिए, पूर्णिया जिले में 70% चावल के खेत सिंचाई सुविधाओं से जुड़े हैं, जबकि बाजरा के केवल 10% खेतों तक ही पानी पहुँच पाता है [33]। सरकारी नीतियों का ढाँचा भी पक्षपाती है। बिहार सरकार की "जल-जीवन-हरियाली" योजना (2021) के तहत 80% फंड चावल-आधारित सिंचाई परियोजनाओं पर खर्च किया गया, जबकि मोटे अनाज के लिए कोई विशेष बजट आवंटित नहीं किया गया [34]। इसके विपरीत, राजस्थान ने "कृषि सूखा प्रबंधन मिशन" के तहत 50,000 हेक्टेयर में मोटे अनाज के लिए सूक्ष्म सिंचाई व्यवस्था विकसित की, जिससे उत्पादन में 25% वृद्धि हुई [35]।

4. चर्चा

इस शोध के निष्कर्ष स्पष्ट करते हैं कि बिहार में मोटे अनाज की उपेक्षा केवल आर्थिक असंतुलन का परिणाम नहीं, बल्कि एक व्यवस्थित नीतिगत विफलता है। उदाहरण के लिए, केंद्र सरकार के राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम (2013) में मोटे अनाज को सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS) से बाहर रखा गया, जिसने इनकी मांग को कृत्रिम रूप से सीमित कर दिया [36]। इस नीति के कारण, 2022-23 में PDS के माध्यम केवल 2% मोटे अनाज वितरित हुए, जबकि चावल और गेहूँ का हिस्सा 94% रहा [37]। यह असंतुलन किसानों को इन फसलों से दूर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसके विपरीत, तमिलनाडु जैसे राज्यों ने PDS में रागी और सामा चावल को 10% कोटा दिया, जिससे 2018-2023 के बीच इन फसलों का उत्पादन 22% बढ़ा [38]।

कृषि विस्तार सेवाओं की विफलता भी एक प्रमुख चुनौती है। बिहार के 85% किसानों को मोटे अनाज की उन्नत किस्मों (जैसे ज्वार की CSV 49 या बाजरा की ICMH 356) या जैविक खेती तकनीकों की जानकारी नहीं है [39]। कृषि विभाग के प्रशिक्षण कार्यक्रमों में केवल 15% सत्र मोटे अनाज पर केंद्रित हैं, जबकि शेष चावल-गेहूं की खेती पर हैं [40]। इसके विपरीत, ओडिशा ने "मिलेट मिशन" के तहत 50,000 किसानों को प्रशिक्षित किया, जिससे रागी उत्पादन में 35% वृद्धि हुई [41]।

सांस्कृतिक पहलू इस समस्या को और गहरा करते हैं। शहरीकरण और मीडिया द्वारा "सफेद चावल" को प्रतिष्ठा का प्रतीक बनाने ने मोटे अनाज को "ग्रामीण गरीबी" से जोड़ दिया है। शोध में पाया गया कि बिहार के 65% युवा उपभोक्ता मोटे अनाज को "अशिक्षित समाज का भोजन" मानते हैं [42]। इस धारणा को तोड़ने में केरल और कर्नाटक सफल रहे हैं, जहाँ स्कूली भोजन कार्यक्रमों में रागी की लड्डू और बाजरा खिचड़ी को शामिल कर 2019-2023 के बीच इनकी मांग 40% बढ़ाई गई [43]। इसी प्रकार, महाराष्ट्र ने "मिलेट कैफे" जैसी पहल से शहरी युवाओं को आकर्षित किया है [44]।

पारिस्थितिक दृष्टि से, मोटे अनाज का पुनरुत्थान बिहार के सूखा-प्रवण क्षेत्रों (जैसे गया, औरंगाबाद, नवादा) के लिए एक समाधान हो सकता है। ICAR के अनुसार, ज्वार की गहरी जड़ें मिट्टी के कटाव को 20% तक कम करती हैं और भूजल स्तर को रिचार्ज करने में मदद करती हैं [45]। इसके अलावा, बाजरा की खेती से प्रति हेक्टेयर 3.5 टन कार्बन सीक्वैस्ट्रेशन होता है, जो जलवायु परिवर्तन शमन में योगदान देता है [46]। राजस्थान के झुंझुनू जिले में, जहाँ 2018 से बाजरा की खेती को बढ़ावा दिया गया, वहाँ मिट्टी की उर्वरता में 18% सुधार दर्ज किया गया [47]।

निष्कर्षतः, मोटे अनाज के पतन के कारणों को समझने और समाधान ढूँढने के लिए नीतिगत पुनर्विचार, सांस्कृतिक पुनर्जागरण, और पारिस्थितिक समझ का समन्वय आवश्यक है।

5. निष्कर्ष एवं सिफारिशें

बिहार में मोटे अनाज की खेती को पुनर्जीवित करने के लिए एक समग्र और बहुस्तरीय रणनीति की आवश्यकता है, जो नीतिगत सुधारों, तकनीकी हस्तक्षेपों, सामाजिक जागरूकता और पारिस्थितिक समर्थन को एक साथ जोड़ती हो।

प्रथम, सरकार को न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) के दायरे में मोटे अनाज को शामिल करना चाहिए और सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS) में इनके लिए न्यूनतम 50% कोटा सुनिश्चित करना चाहिए। ओडिशा और छत्तीसगढ़ जैसे राज्यों ने इस मॉडल को अपनाकर उत्पादन में 30-35% की उल्लेखनीय वृद्धि हासिल की है। साथ ही, चावल-गेहूं पर दी जाने वाली सब्सिडी का एक हिस्सा मोटे अनाज के लिए विशेष रूप से आवंटित किया जाना चाहिए, ताकि किसानों को आर्थिक प्रोत्साहन मिल सके।

द्वितीय, किसानों को टिकाऊ कृषि पद्धतियों से जोड़ने के लिए जैविक खाद, ड्रिप सिंचाई और उन्नत बीजों पर विशेष अनुदान दिए जाने चाहिए। राजस्थान में ड्रिप सिंचाई के प्रसार से बाजरा उत्पादन में 30% वृद्धि दर्ज की गई है, जो इस बात का प्रमाण है कि तकनीकी समर्थन से संसाधन दक्षता बढ़ाई जा सकती है। इसके अलावा, मोटे अनाज की उन्नत किस्मों जैसे ज्वार की CSV 49 और बाजरा की ICMH 356 को व्यापक पैमाने पर किसानों तक पहुँचाना आवश्यक है।

तृतीय, सामाजिक धारणाओं को बदलने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर "मोटा अनाज उत्सव" जैसे अभियान चलाए जाने चाहिए, जो युवाओं और शहरी उपभोक्ताओं को लक्षित करें। केरल और कर्नाटक में स्कूली भोजन कार्यक्रमों में रागी और बाजरा को शामिल करके इनकी मांग में 40% वृद्धि की गई है। इसी प्रकार, महाराष्ट्र के "मिलेट कैफे" और ई-कॉमर्स प्लेटफॉर्म पर "हेल्थ फूड" के रूप में मोटे अनाज को बढ़ावा देकर शहरी बाजार तक पहुँच बनाई जा सकती है।

चतुर्थ, बाजार संरचना में सुधार करते हुए मोटे अनाज के लिए विशेष मंडियाँ स्थापित की जानी चाहिए, जहाँ किसानों को बिचौलियों के शोषण के बिना उचित मूल्य मिल सके। महाराष्ट्र के अकोला जिले में "बाजरा एक्सपोर्ट हब" की स्थापना से किसानों को निर्यात बाजार में 200% अधिक लाभ प्राप्त हुआ है। साथ ही, प्रसंस्कृत उत्पादों जैसे मिलेट बिस्कुट, आटा और स्नैक्स के निर्माण को प्रोत्साहित करके मूल्य संवर्धन किया जाना चाहिए।

अंतिम, पारिस्थितिक दृष्टि से संवेदनशील क्षेत्रों (जैसे गया, औरंगाबाद) में मोटे अनाज की खेती को बीमा कवरेज और कार्बन क्रेडिट योजनाओं से जोड़ा जाना चाहिए। ये फसलें न केवल जल संरक्षण करती हैं, बल्कि प्रति हेक्टेयर 2.5 टन कार्बन सीक्वैस्ट्रेशन के माध्यम से जलवायु परिवर्तन से निपटने में भी सहायक हैं। राजस्थान के झुंझुनू जिले में इस तरह के प्रयोगों से मिट्टी की गुणवत्ता में 18% सुधार देखा गया है।

इन सिफारिशों के क्रियान्वयन से न केवल बिहार के किसानों की आय में स्थिरता आएगी, बल्कि राज्य की पोषण सुरक्षा, जल संरक्षण और जलवायु लचीलापन भी मजबूत होगा। इसके लिए सरकार, निजी क्षेत्र और स्थानीय समुदायों के बीच समन्वय आवश्यक है।

संदर्भ

बिहार कृषि विभाग, "कृषि जनगणना रिपोर्ट," 2020.

NITI Aayog, "भारत में कृषि संकट," 2019.

NITI Aayog, "पोषण सुरक्षा के लिए मोटे अनाज को बढ़ावा," 2018.

R.P. कृषि विश्वविद्यालय, "बिहार में कृषि प्रथाओं का सामाजिक अध्ययन," 2020.

- ICAR, "जलवायु-लचीली कृषि," 2019.
- A. सिंह और R. शर्मा, "छत्तीसगढ़ में मोटे अनाज का पुनरुत्थान," *EPW*, 2021.
- FAO, "जलवायु परिवर्तन और फसल विविधीकरण," 2020.
- भारत सरकार, "राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम," 2013.
- केरल सरकार, "स्कूली भोजन कार्यक्रम," 2022.
- ICAR, "मृदा संरक्षण तकनीकें," 2021.
- ICAR, "Nutrient Composition of Millets," 2019.
- बिहार कृषि विभाग, "मोटे अनाज पर किसान सर्वेक्षण," 2023.
- NITI Aayog, "MSP और किसान आय: एक विश्लेषण," 2022.
- A. कुमार एवं S. यादव, "MSP जागरूकता और बिहार के किसान," *कृषि नीति जर्नल*, 2021.
- भारत सरकार, "कृषि सब्सिडी रिपोर्ट," 2023.
- ICAR-एनआईएपी, "मोटे अनाज का बाजार विश्लेषण," 2020.
- बिहार कृषि विभाग, "मोटा अनाज मिशन सर्वेक्षण," 2023.
- NITI Aayog, "बिहार में नीतिगत कार्यान्वयन की चुनौतियाँ," 2022.
- A. सिंह, "छत्तीसगढ़ मिलेट मिशन: एक केस स्टडी," *कृषि नीति शोध*, 2021.
- बिहार वित्त विभाग, "बजट आवंटन रिपोर्ट," 2023.
- ICAR-आईआईएमआर, "मोटे अनाज पर सब्सिडी विश्लेषण," 2022.
- बिहार सरकार, "कृषि रोडमैप 2025," 2022.
- R.P. कृषि विश्वविद्यालय, "युवा किसानों की धारणाएँ," 2023.
- एस. मिश्रा एवं के. सिन्हा, "मीडिया और कृषि संस्कृति," *सामाजिक अनुसंधान जर्नल*, 2022.
- बिहार कृषि विपणन बोर्ड, "मोटे अनाज की मांग विश्लेषण," 2023.
- भारतीय खाद्य निगम (FCI), "मूल्य रुझान रिपोर्ट," 2023.
- NITI Aayog, "सार्वजनिक वितरण में मोटे अनाज," 2023.
- ICAR, "मोटे अनाज की पारिस्थितिक क्षमता," 2022.
- FAO, "जल उपयोग दक्षता तुलना," 2021.
- ICAR-भूमि संरक्षण विभाग, "मिट्टी स्वास्थ्य रिपोर्ट," 2023.
- बिहार कृषि विभाग, "सिंचाई सुविधा सर्वेक्षण," 2023.
- NITI Aayog, "सूखा प्रबंधन और बिहार," 2022.
- पूर्णिया जिला कृषि अधिकारी, "फसलवार सिंचाई डेटा," 2023.
- बिहार जल संसाधन विभाग, "योजना आवंटन रिपोर्ट," 2021.
- राजस्थान कृषि विभाग, "सूक्ष्म सिंचाई प्रभाव," 2022.
- भारत सरकार, "राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम," 2013.
- FCI, "PDS अनाज वितरण रिपोर्ट," 2023.
- तमिलनाडु कृषि विभाग, "मोटे अनाज का PDS प्रभाव," 2023.
- ICAR-ATARI, "कृषि विस्तार सेवाओं का मूल्यांकन," 2022.
- बिहार कृषि विभाग, "प्रशिक्षण कार्यक्रम रिपोर्ट," 2023.
- ओडिशा मिलेट मिशन, "सफलता केस स्टडी," 2022.
- R. वर्मा एवं एस. पांडे, "युवा और खाद्य प्राथमिकताएँ," *सामाजिक विज्ञान शोध*, 2023.

केरल पोषण मिशन, "स्कूली भोजन कार्यक्रम," 2023.

महाराष्ट्र पर्यटन विभाग, "मिलेट कैफे पहल," 2022.

ICAR-भूमि संरक्षण विभाग, "ज्वार की पारिस्थितिक भूमिका," 2021.

FAO, "कार्बन सीक्रेस्टेशन और मोटे अनाज," 2020.

राजस्थान कृषि विभाग, "झुंझुनू मॉडल," 2023.